13

जैन चित्रकला की एक विशिष्ठ उपलब्धि : सचित्र विज्ञप्ति–पत्र

डॉ अलका चद्ढा* **विभा लोधी****

भारतीय दर्शन साहित्य और कला के क्षेत्र में जैनों का बहुत बड़ा योगदान है । जैन साहित्य प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, महाराष्ट्री, कन्नड़ और तमिल आदि भाषाओं में, उसी तरह ललित कला के सभी अंगों–मंदिर, मूर्ति, चित्रकला आदि में जैन कलाकारों और कला प्रेमियों ने खूब काम किया है । भारत के सभी प्रदेशों में जैन समाज निवास करता है अतः जैन कला की सामग्री भी सभी प्रान्तों में बिखरी पड़ी है । जैन मंदिरों में आबू, राणकपुर आदि बहुत प्रसिद्ध हैं, इसी तरह जैन मूर्तियों में पाषाण और धातु की बहुत ही भव्य और कलात्मकता पाई जाती है । चित्रकला की भी जैन सामग्री बहुत सुरक्षित रही, फलतः अपभ्रंश काल की भारतीय चित्रकला की सामग्री सबसे अधिक जैनों से ही प्राप्त है ।

प्राचीन भारतीय चित्रकला के उदाहरण गुफाओं और भित्ति चित्रों में पाए जाते हैं । जैन गुफायें भी कुछ ऐसी मिली हैं, जिनमें प्राचीन चित्र उपलब्ध हैं । मध्यकालीन भित्ति चित्रण शैली की समाप्ति के साथ पुस्तकों में चित्र बनाने की प्रथा का प्रचलन चित्रण के इतिहास की अत्यन्त महत्वपूर्ण कड़ी है । साहित्यिक साक्ष्यों के होते हुए भी दसवीं–ग्यारहवीं शताब्दी से पहले के ग्रन्थ–चित्रों के उदाहरण प्राप्त नहीं होते । चित्रण के इतिहास में एक नये आयाम का सूत्रपात करते हुए चित्रित ताड़पत्रीय ग्रन्थों की श्रृंखला में दशवैकालिकसूत्रवृत्ति तथा ओद्यनिर्युक्तिवृत्ति वह आदिकालीन चित्रित ग्रन्थ है जिनके भण्डारण का श्रेय तथा गौरव जैसलमेर ज्ञान ग्रन्थ भण्डार को प्राप्त है।[1] जैसलमेर, पाहण, खंभात आदि के जैन भण्डारों में 12वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी तक अनेकों सचित्र ताड़पत्रीय प्रतियां पाई जाती है । श्वेताम्बर जैन धर्म से सम्बन्धित ताड़पत्रीय पोथियों में 'निशीथचूर्णी', 'अंगसूत्र', 'दशवैकलिक लघुवृत्ति', 'त्रिषष्ठिशलाकापुरूपचरित', 'नेमिनाथचरित', 'कथासरितसागर', 'संग्रहणीसूत्र', 'उत्तराध्यनसूत्र', 'श्रावकप्रतिक्रमणचूर्णी' तथा 'कल्पसूत्र' हैं । इस सिचित्र पोथियों का लिपिकाल 1000 ई0 से 1500 ई0 के मध्य माना जाता है । यह पोथियां भारत में आज पाटन, बड़ौदा, खंभात, अहमदाबाद तथा जैसलमेर के निजी पुस्तकालयो या अमेरिका के बोस्टन स्थित संग्राहलयों में प्राप्त हैं [2]।

इन ताड़पत्रीय प्रतियों की सुरक्षा के लिये दोनों ओर काष्ठ की पट्टिकाएं रखी जाती थी । काष्ठ पट्टिकाओं के ज्यामितीय अभिप्राय तथा फूल–पत्ती से बने पैटर्न अपभ्रंश शैली तथा राजस्थानी शैली में पर्याप्त लोकप्रिय हुए ।[3] इनमे से कई सचित्र काष्ट पट्टिकायें 12–13वीं शताब्दी की जैसलमेर के बड़े ज्ञान भण्डार में सुरक्षित हैं । 14वीं–15वीं शताब्दी से वस्त्र पर भी चित्र बनाये जाने लगे। ऐसे बहुत से वस्त्र पट्ट भी जैन ज्ञान भण्डारों में और व्यक्तिगत संग्रहों में उपलब्ध हैं । 14वीं शताब्दी में कागज का प्रचार अधिक हो गया, तब से कागज की हस्तलिखित प्रतियां कल्पसूत्र, कलिकाचार्य कथा आदि की सचित्र प्रतियां मिलने लगी । आज भी ऐसी स्वर्णक्षरी और सचित्र प्रतियां जैनाचार्य और मुनियों द्वारा तैयार करवाई जाती हैं ।

---

*वरिष्ठ प्रवक्ता, चित्रकला विभाग, आर0जी0पीजी0 कालेज,मेरठ

**शोध छात्रा, चित्रकला विभाग, आर0जी0पीजी0 कालेज, मेरठ ।

सचित्र विज्ञप्ति–पत्र जैन चित्रकला की एक विशिष्टि उपलब्धि है । 17वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक ऐसे पचासों सचित्र विज्ञप्ति–पत्र प्राप्त हो चुके हैं । ये पत्र जैनाचार्यों को अपने यहाँ पधारने के लिये विनती के रूप में लिखे जाते थे । ऐसा संचित्र विज्ञाप्ति–पत्र विजय सेन सूरि का प्राप्त हुआ है, जिसे मुगलशाही चित्रकारों ने चित्रित किया है। अभी यह 17वीं शताब्दी का सचित्र विज्ञप्ति–पत्र आगम प्रभाकर स्वर्गीय मुनिश्री पुण्य विजय जी के संग्रह में है जो ला.द. भारतीय संस्कृति विद्या मंदिर, अहमदाबाद में प्रदर्शित है ।[4] इसके बाद 18–19वीं शताब्दी में तो ऐसे सचित्र विज्ञप्ति–पत्र पचास तैयार हुए । 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध का भी एक बहुत सुन्दर पत्र जयपुर का प्राप्त हुआ है । इसमें जयपुर नगर के भी बहुत सुन्दर चित्र पाये जाते हैं । 19वीं शताब्दी का उदयपुर का एक सचित्र विज्ञप्ति–पत्र है । वह करीब 72 फुट लम्बा है । बीकानेर के बड़े उपाश्रय के वृहद ज्ञान भण्डार में बीकानेर का एक सचित्र विज्ञप्ति–पत्र हमें पाटण, बड़ौदा आदि में देखने को मिलते हैं । गत तीस वर्षों में जो जैन सचित्र विज्ञप्ति–पत्र प्राप्त हुए है उनमें से कुछ करीब 100 फुट लम्बा है, जिनमें कुछ बीकानेर के ज्ञान भण्डार में हैं, कुछ अहमदाबाद के डेहला उपाश्रय, कुछ उपरोक्त पुण्य विजय जी के संग्रह में और कुछ कलकत्ता कला मर्मज्ञ श्री पूर्णानन्द जी नाहर के संग्रह में तथा सुरपत सिंहजी दुगड़, बहादुर सिंह जी सिंधी और गुजराती जैन सभा आदि में हमें ऐसे सचित्र विज्ञप्ति–पत्र देखने को मिले हैं, जो चित्रकला की दृष्टि से बहुत ही मूल्यवान हैं ।[5]

अब ऐसे विज्ञप्ति–पत्र कैसे तैयार किये जाते थे, और उसमें साहित्य और कला का कैसा सुन्दर समन्वय होता था यह भी देखना महत्त्वपूर्ण है । इन विज्ञप्तियों का भौगोलिक दृष्टि से भी विशेष महत्त्व है । अपर्वा चित्र शैली में अधिकांश तीर्थकर महावीर के जीवन दर्शन तथा घटनाओं से सम्बन्धित चित्रों का समावेश है । इस चित्र शैली के वैभव को हम जैन ग्रन्थ भण्डार पाटन, जैन भण्डार जैसलमेर, आर्ट गैलरी तथा बड़ौदा म्यूजियम बड़ौदा, कला भवन वाराणसी, लाल भाई संग्रह, अहमदाबाद, गायनका संग्रह, कलकत्ता तथा राजस्थान स्पेंसर संग्रह न्यूयार्क (अमेरिका) में देख सकते हैं ।[6] केवल जैन दृष्टि से ही नही भारतीय चित्रकला की दृष्टि से भी इनकी विविधता और विशिष्टता बहुत ही उल्लेखनीय है । जैन कला भावात्मकता से अधिक बुद्धित्वता की कला है, यह मुख सम्बन्धी तथा सुलिपि की कला है ।[7] समय–समय पर इस कला में काफी विकास होता रहा है । अनेक चित्र शैलियों में ये चित्रित किए गये हैं । अनेक तरह के दृश्य एवं भाव इनमें चित्रित किये गये हैं । सचित्र विज्ञप्ति–पत्रों में कुछ तो काफी छोटे हैं और कुछ बहुत बड़े हैं इनकी चौड़ाई में भी काफी विभिन्नता पाई जाती है। टिप्पणाकार बड़े लम्बे–लम्बे कागजों को जोड़कर ये बनाया करते थे। सबसे पहले इनमें प्रायः 'पूर्ण कलश' चित्रित किया जाता है, जो देखने में बहुत आकर्षक लगता था । इसके बाद जैन आगमों में मान्य 8 मंगलिक के चित्र बनाये जाते थे । 2500 वर्षों से ये 8 प्रकार के मंगलिक जैन कला में उत्कीर्णित और चित्रित होते रहे हैं । इनमें स्वस्तिक और मच्छ आदि 8 वस्तुएं होती है । इसके बाद जैन तीर्थकरों की मातायें 14 महा स्वप्न देखती है उनका चित्रण किया जाता है । फिर माता शय्या पर सोई हुई उन स्पवनों को देख रही हों, इस तरह का चित्र बनाया जाता है । तदनंतर जैन तीर्थकरों में से पार्श्वनाथ आदि के चित्र बनाये जाते हैं । फिर जिस नगर से विज्ञप्ति–पत्र आचार्य श्री को भेजे जाते हैं उस नगर के मुख्य–2 स्थानों के चित्र बनाये जाते हैं । इन चित्रों से उस समय के उन नगर ग्रामों का दृश्य हमारे सामने उपस्थित हो जाता है । जिस रास्ते से आचार्य श्री नगर में पधारते हैं उस रास्ते के मकान, दुकान, मन्दिर, बीच में राज मार्ग, बाजार, बिकने वाली वस्तुएं, राज मार्ग पर चलते घोड़े, रथ, ऊँट आदि वाहन और कईयों में तो राजाओं की लम्बी सवारी पूरी लावलश्कर और सज्जा के

साथ चित्रित की जाती है । उदयपुर के सचित्र विज्ञप्ति–पत्र में तो राज महलात् चित्रित करे राज मार्ग, मकान, दुकान मन्दिर आदि के चित्र बनाने के बाद पिछोला तालाब और उनमें उसके बीच में बने हुए राजमहल, महाराणा का नौका विहार और राजकीय ठाट–बाट की पूरी सवारी चित्रित की गई है । इससे उस समय की राजकीय सवारी में क्या–क्या सामान और वस्तुएं रहती थीं, लोगों की वेशभूषा क्या थी, कहाँ पर बाजार में क्या चीजें बिकती थीं, जैन और जैनेतर कौन–कौन से मंदिर रास्ते में पड़ते थे, इत्यादि अनेक बातों की जानकारी सहज ही मिल जाती है । तदनंतर आचार्य महाराज अपने मुनियों के साथ नगर के दरवाजे दिखाये जाते हैं । श्रावक श्राविकाएं उन्हें वंदन करने के लिए पहुंचते हैं । इस तरह एक बहुत ही भव्य दृश्य इन विज्ञप्ति–पत्रों में देखने को मिलता है । चित्रों के बाद मूल लेख प्रारम्भ होता है, जिसमें जहाँ आचार्य श्री विराजते हैं उस नगर का, आचार्य श्री के गुणों का लंबा विवरण देकर, जहाँ से पत्र भेजा जाता है वहाँ के आचार्य श्री के आज्ञानुयायी साधुओं और श्रावकों आदि की वंदना सूचित करते हुए अपने वहाँ पधारने की विनती लिखी जाती है । इस प्रसंग में जहाँ से लेख भेजा गया और जहाँ को भेजा गया उन दोनों नगरों का काव्यमय गजल आदि के रूप में वर्णन कवियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है । आचार्य श्री के श्री गुणगीत लिखे जाते हैं । अंत में जहाँ से पत्र भेजा जाता है, वहाँ के प्रधान श्रावकों के हस्ताक्षर लिखे रहते हैं । इससे उस समय उस नगर में कौन–कौन मुख्य व्यक्ति थे, इसकी भी जानकारी मिल जाती है ।

जिस तरह प्रजा में राजा का बड़ा सम्मान होता है उसी तरह धर्माचायों का भी उनके अनुयायी साधु साध्वियों और श्रावक श्राविकाओं द्वारा बहुत बहुमान किया जाता रहा है । इसलिए प्रत्येक नगर का राजा और जैन संघ यही चाहता था कि हमारे यहाँ धर्माचार्य पधारें और चौमासा करें, जिससे जैन समाज को नीति और धर्म की पूरी प्रेरणा मिले, लोगों का जीवन सदाचारी और ज्ञानवान बने । फलतः अपने–अपने सम्प्रदाय व गच्छ के आचार्यों को ऐसे विशिष्ट, विज्ञप्ति–पत्र भेजे जाते थे, जिनको तैयार करने में बहुत समय, श्रम और द्रव्य व्यय होता था। विद्वान मुनिगण अपनी काव्य प्रतिभा और विद्वता का ऐसे पत्रों के लेखन में उपयोग करते थे । श्रावक लोग कुशल चित्रकारों द्वारा सुन्दर से सुन्दर चित्र बनवाने में काफी रूपये खर्च करते थे । कलाकारों को इससे आजीविका और बड़ा प्रोत्साहन मिलता था ।

सचित्र विज्ञप्ति–पत्र की प्रथा चालू होने से पहिले प्राकृत संस्कृत में गद्य और पद्य विद्ववानों द्वारा लिखे व भेजे जाते रहे हैं । इनमें कई तो बहुत ही महत्व के हैं । ऐसे विज्ञप्ति–पत्रों का एक संग्रह मुनि जिनविजय जी ने सिंधी जैन ग्रन्थमाला से प्रकाशित करवाया है । इन पत्रों में अपने यहाँ के पर्युषण आदि के धार्मिक समाचार और यात्राओं का वर्णन भी रहा करता था । इससे इतिहास एवं भूगोल संबंधी अनेकों महत्वपूर्ण सूचनाएं मिल जाती हैं । पहले नगर वर्णन आदि काव्य रूप में लिखे जाते थे । वे सचित्र विज्ञप्ति–पत्रों में दृश्य रूप में चित्रित किये जाने लगे । चित्रों में रंगों का वैविध्य भी उल्लेखनीय है । पशु–पक्षी वृक्ष फल पत्ते आदि अनेक प्रकार के चित्र सचित्र विज्ञप्ति–पत्रों में पाये जाते हैं । अतः अनेक दृष्टियों से ऐसे पत्रों का बहुत ही महत्व है । सचित्र विज्ञप्ति–पत्रों के चित्रों के अध्ययन से चित्र शैलियों की भिन्नता और स्थानीय विशेषताओं पर प्रकाश पड़ता है । आवश्यकता है कि प्राप्त सचित्र विज्ञप्ति–पत्रों का गहराई से और तुलनात्मक अध्ययन किया जाये । ये सचित्र विज्ञप्ति–पत्र श्वेताम्बर मूर्ति पूजक समाज द्वारा ही तैयार किये जाते रहे हैं । इनका आंशिक अनुकरण राम स्नेही आदि अन्य सम्प्रदायों में भी हुआ है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ

(1) Khandelwal, Karl :- Rajput Painting, Pennsy Lvania State University, B.R. Pub. 2003, P-6

(2) वर्मा, अविनाश बहादुर : भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रकाशक बुक डिपो, बरेली । 1973, पृ0–107

(3) श्रोत्रिय शुकदेव : भारतीय ग्रन्थ चित्रण की सामग्री एवं पद्धति, चित्रायन प्रकाशन, मुजफ्फरनगर, 1997, पृ0–61

(4) उपाध्याय विद्यासागर : आकृति, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, जनवरी 1976, पृ0–87

(5) उपाध्याय विद्यासागर : आकृति, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, जनवरी 1976, पृ0–87

(6) गोस्वामी, प्रेमचन्द : भारतीय चित्रकला का इतिहास , पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1999, पृ0–87

(7) दास, कुसुम : भारतीय कला परिचय, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, 1977, पृ0–120